

झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन: कारण, चुनौतियाँ एवं सामाजिक-आर्थिक

प्रभाव का विश्लेषणात्मक अध्ययन

दीपेन्द्र कुमार

एम.ए. (इतिहास)

डॉ. भीमराव अंबेडकर विश्वविद्यालय, आगरा

मनीष कुमार

शोधार्थी (समाजशास्त्र विभाग) श्री गणेश राय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, डोभी जौनपुर

वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय

सारांश (Abstract)

मौसमी पलायन झारखंड के जनजातीय समाज के समक्ष एक जटिल सामाजिक-आर्थिक चुनौती के रूप में उभरकर सामने आया है। राज्य के अनेक जनजातीय परिवार कृषि की मौसमी प्रकृति, सीमित भूमि स्वामित्व, रोजगार के स्थानीय अवसरों की कमी तथा गरीबी के कारण वर्ष के कुछ महीनों में अन्य राज्यों की ओर पलायन करने के लिए विवश होते हैं। यद्यपि पलायन से अल्पकालिक आय में वृद्धि होती है, किन्तु इसके साथ शिक्षा में व्यवधान, स्वास्थ्य संबंधी जोखिम, महिलाओं और बच्चों की असुरक्षा, पारिवारिक अलगाव तथा सांस्कृतिक जीवन पर प्रतिकूल प्रभाव जैसी अनेक समस्याएँ भी जुड़ी हुई हैं। उपलब्ध अध्ययनों से यह भी स्पष्ट होता है कि पलायन केवल आर्थिक आवश्यकता का परिणाम नहीं है, बल्कि यह विकास की असमानताओं, संसाधनों तक सीमित पहुँच तथा ग्रामीण रोजगार के अभाव का भी संकेतक है। यह शोध-लेख पूर्णतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। अध्ययन के लिए प्रकाशित पुस्तकों, सहकर्मी-समीक्षित (peer-reviewed) शोध-पत्रों, सरकारी रिपोर्टों, जनगणना, Periodic Labour Force Survey (PLFS) तथा जनजातीय विकास से संबंधित दस्तावेजों का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन का उद्देश्य झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन के प्रमुख कारणों, उससे उत्पन्न सामाजिक एवं आर्थिक चुनौतियों तथा सरकारी हस्तक्षेपों की प्रभावशीलता का आलोचनात्मक मूल्यांकन करना है। लेख यह निष्कर्ष प्रस्तुत करता है कि केवल कल्याणकारी योजनाएँ पर्याप्त नहीं हैं; स्थानीय स्तर पर टिकाऊ आजीविका, कृषि विविधीकरण, कौशल विकास, वन-आधारित उद्यमों और प्रभावी सामाजिक सुरक्षा तंत्र के माध्यम से ही विवशतापूर्ण मौसमी पलायन को कम किया जा सकता है।

Keywords: मौसमी पलायन, जनजातीय समाज, झारखंड, आजीविका, सामाजिक प्रभाव, आर्थिक प्रभाव, ग्रामीण विकास, जनजातीय विकास

परिचय (Introduction)

पलायन मानव समाज की एक प्राचीन एवं निरंतर चलने वाली सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया है। लोग बेहतर आजीविका, रोजगार, शिक्षा, सुरक्षा तथा जीवन-स्तर में सुधार की उम्मीद में समय-समय पर एक स्थान से दूसरे स्थान की ओर स्थानांतरित होते रहे हैं। भारत में आंतरिक पलायन विशेष रूप से ग्रामीण और जनजातीय क्षेत्रों में व्यापक रूप से देखा जाता है। इसी संदर्भ में मौसमी पलायन एक महत्वपूर्ण स्वरूप है, जिसमें व्यक्ति या परिवार वर्ष के सीमित समय के लिए स्थानीय स्तर पर रोजगार की कमी अथवा कृषि कार्य समाप्त होने के बाद अन्य क्षेत्रों में काम की तलाश में जाते हैं और कार्य पूरा होने पर अपने मूल निवास स्थान लौट आते हैं। यह प्रक्रिया केवल आर्थिक गतिविधि नहीं है, बल्कि इसका प्रभाव परिवार, शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक संबंधों और सांस्कृतिक जीवन पर भी पड़ता है।

झारखंड देश का एक प्रमुख जनजातीय बहुल राज्यों में से एक है, जहाँ बड़ी संख्या में अनुसूचित जनजातियाँ निवास करती हैं। यहाँ की अधिकांश जनजातियाँ पारंपरिक रूप से वर्षा-आधारित कृषि, लघु वनोपज संग्रह, पशुपालन तथा दिहाड़ी मजदूरी पर निर्भर रही हैं। किन्तु सीमित कृषि योग्य भूमि, सिंचाई सुविधाओं का अभाव, कृषि की अनिश्चितता, वन संसाधनों में कमी, स्थानीय स्तर पर रोजगार के सीमित अवसर, गरीबी तथा ऋणग्रस्तता जैसी परिस्थितियाँ अनेक परिवारों

को प्रत्येक वर्ष कृषि के अवकाश काल में अन्य राज्यों की ओर पलायन के लिए प्रेरित करती हैं। दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक और केरल जैसे राज्यों में निर्माण कार्य, ईट-भट्ठों, कृषि, उद्योग तथा सेवा क्षेत्र में बड़ी संख्या में जनजातीय श्रमिक अस्थायी रोजगार प्राप्त करते हैं।

मौसमी पलायन को केवल बेरोजगारी का परिणाम मानना पर्याप्त नहीं होगा। विभिन्न अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि इसके पीछे आर्थिक, सामाजिक और पर्यावरणीय कारकों का संयुक्त प्रभाव कार्य करता है। भूमिहीनता, कम कृषि उत्पादकता, प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ता दबाव, ग्रामीण अवसंरचना की कमी, कम मजदूरी तथा स्थानीय स्तर पर वैकल्पिक रोजगार के सीमित अवसर इस प्रवृत्ति को बढ़ावा देते हैं। परिणामस्वरूप अनेक जनजातीय परिवारों के लिए मौसमी पलायन अब एक अस्थायी विकल्प नहीं, बल्कि आजीविका बनाए रखने की नियमित रणनीति बन चुका है।

यद्यपि पलायन से परिवारों की आय में कुछ वृद्धि होती है और नकद आय के नए स्रोत उपलब्ध होते हैं, लेकिन इसके सामाजिक और आर्थिक दुष्परिणाम गंभीर हैं। अधिकांश प्रवासी श्रमिक असंगठित क्षेत्र में कार्य करते हैं, जहाँ उन्हें कम मजदूरी, असुरक्षित कार्य परिस्थितियाँ, सामाजिक सुरक्षा के अभाव, श्रम शोषण तथा स्वास्थ्य संबंधी जोखिमों का सामना करना पड़ता है। दूसरी ओर, गाँवों में पीछे रह जाने वाले बच्चों की शिक्षा बाधित होती है, महिलाओं पर घरेलू और कृषि संबंधी दायित्वों का अतिरिक्त बोझ बढ़ जाता है तथा पारिवारिक और सामुदायिक संबंधों में भी परिवर्तन दिखाई देता है। कई मामलों में पारंपरिक सांस्कृतिक गतिविधियाँ और सामुदायिक सहभागिता पर भी इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

इन चुनौतियों को ध्यान में रखते हुए केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा), कौशल विकास कार्यक्रमों, जनजातीय आजीविका संवर्धन योजनाओं, वनाधिकार संबंधी नीतियों तथा अन्य ग्रामीण विकास कार्यक्रमों के माध्यम से स्थानीय रोजगार और आय के अवसर बढ़ाने के प्रयास किए गए हैं। इसके बावजूद उपलब्ध शोध यह संकेत देते हैं कि झारखंड के अनेक जनजातीय क्षेत्रों में मौसमी पलायन की प्रवृत्ति अभी भी व्यापक रूप से बनी हुई है। इससे यह प्रश्न उठता है कि वर्तमान नीतियाँ और योजनाएँ जनजातीय समुदायों की आजीविका संबंधी असुरक्षाओं को किस सीमा तक कम कर पा रही हैं तथा स्थानीय स्तर पर रोजगार, कृषि विविधीकरण और सामाजिक सुरक्षा को और अधिक प्रभावी बनाने की आवश्यकता कहाँ मौजूद है।

साहित्य समीक्षा से यह भी स्पष्ट होता है कि झारखंड में पलायन पर अनेक अध्ययन उपलब्ध हैं, परंतु अधिकांश शोध रोजगार, श्रम बाजार अथवा ऐतिहासिक प्रवृत्तियों जैसे किसी एक आयाम तक सीमित हैं। अपेक्षाकृत कम अध्ययन ऐसे हैं जो मौसमी पलायन के कारणों, उससे उत्पन्न सामाजिक चुनौतियों तथा सामाजिक-आर्थिक प्रभावों का समेकित और विश्लेषणात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करते हों। यही इस अध्ययन की प्रमुख शोध-आवश्यकता है।

इन्हीं तथ्यों की पृष्ठभूमि में प्रस्तुत शोध-लेख पूर्णतः द्वितीयक स्रोतों पर आधारित है। अध्ययन में प्रकाशित पुस्तकों, शोध-पत्रों, सरकारी रिपोर्टों, जनगणना, Periodic Labour Force Survey (PLFS) तथा अन्य विश्वसनीय दस्तावेजों का विश्लेषण किया गया है। इसका उद्देश्य झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन के प्रमुख कारणों, उससे उत्पन्न सामाजिक एवं आर्थिक चुनौतियों तथा सरकारी हस्तक्षेपों की प्रभावशीलता का आलोचनात्मक परीक्षण करना है। साथ ही, उपलब्ध साक्ष्यों के आधार पर ऐसे नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना भी इस अध्ययन का उद्देश्य है, जो स्थानीय स्तर पर टिकाऊ आजीविका के अवसरों का विस्तार कर विवशतापूर्ण मौसमी पलायन को कम करने में सहायक हो सकें।

मौसमी पलायन की अवधारणा

मौसमी पलायन आंतरिक पलायन का एक ऐसा स्वरूप है, जिसमें व्यक्ति या परिवार वर्ष के किसी निश्चित समय में रोजगार अथवा आजीविका की तलाश में अपने मूल निवास स्थान से दूसरे क्षेत्र में अस्थायी रूप से जाते हैं और कार्य समाप्त होने पर पुनः अपने गाँव या स्थायी निवास स्थान लौट आते हैं। यह पलायन स्थायी निवास परिवर्तन का रूप नहीं लेता, बल्कि स्थानीय रोजगार की उपलब्धता, कृषि चक्र तथा श्रम की मौसमी मांग के अनुसार संचालित होता है। इसी कारण इसे चक्रीय अथवा अस्थायी पलायन की श्रेणी में भी रखा जाता है (Deshingkar & Start, 2003)।

भारतीय ग्रामीण समाज में मौसमी पलायन मुख्यतः उन परिवारों में अधिक पाया जाता है जिनकी आजीविका वर्षा-आधारित कृषि, कृषि मजदूरी, वनोपज संग्रहण या असंगठित श्रम पर निर्भर होती है। कृषि कार्य समाप्त होने अथवा स्थानीय स्तर पर रोजगार के अवसर कम होने पर परिवार का एक या अधिक सदस्य ऐसे क्षेत्रों की ओर प्रस्थान करता है जहाँ निर्माण

कार्य, ईट-भट्टों, कृषि, खनन, उद्योग अथवा सेवा क्षेत्र में श्रमिकों की मांग अपेक्षाकृत अधिक होती है। निर्धारित अवधि तक कार्य करने के बाद वे पुनः अपने मूल स्थान पर लौट आते हैं। इस दृष्टि से मौसमी पलायन ग्रामीण परिवारों की आय बनाए रखने और आजीविका के जोखिम को कम करने की एक महत्वपूर्ण रणनीति के रूप में देखा जाता है।

पलायन की प्रक्रिया को समझाने के लिए समाजशास्त्र, भूगोल तथा विकास अध्ययन में अनेक सिद्धांत विकसित किए गए हैं। इनमें एवरेट एस. ली (Everett S. Lee, 1966) का Push-Pull Theory विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इस सिद्धांत के अनुसार पलायन पर दो प्रकार की परिस्थितियाँ प्रभाव डालती हैं। पहली, वे प्रतिकूल परिस्थितियाँ जो व्यक्ति को अपने मूल स्थान से बाहर जाने के लिए विवश करती हैं, जैसे गरीबी, बेरोजगारी, भूमिहीनता, कम मजदूरी, प्राकृतिक आपदाएँ तथा सीमित आजीविका के अवसर। दूसरी ओर, वे अनुकूल परिस्थितियाँ जो दूसरे क्षेत्रों की ओर आकर्षित करती हैं, जैसे अधिक मजदूरी, रोजगार की उपलब्धता, बेहतर कार्य अवसर तथा अपेक्षाकृत उच्च जीवन-स्तर। झारखंड के जनजातीय क्षेत्रों में मौसमी पलायन का विश्लेषण करते समय यह सिद्धांत विशेष रूप से प्रासंगिक प्रतीत होता है, क्योंकि स्थानीय आर्थिक कठिनाइयों और बाहरी राज्यों में उपलब्ध रोजगार के अवसरों का संयुक्त प्रभाव पलायन की प्रक्रिया को गति देता है।

झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन की प्रकृति कुछ विशिष्ट विशेषताओं के साथ दिखाई देती है। राज्य के अधिकांश आदिवासी परिवार सीमित कृषि भूमि, वर्षा-आधारित खेती, वनोपज तथा असंगठित श्रम पर निर्भर हैं। कृषि कार्य समाप्त होने के बाद स्थानीय स्तर पर पर्याप्त रोजगार उपलब्ध न होने के कारण परिवारों के सदस्य कुछ महीनों के लिए अन्य राज्यों में काम करने चले जाते हैं और अगला कृषि मौसम प्रारम्भ होने से पहले वापस लौट आते हैं। इस प्रकार पलायन उनके वार्षिक आजीविका चक्र का नियमित हिस्सा बन जाता है। उपलब्ध साहित्य से यह भी स्पष्ट होता है कि सीमांत कृषक, भूमिहीन तथा आर्थिक रूप से कमजोर जनजातीय परिवार इस प्रक्रिया से अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित होते हैं।

मौसमी पलायन के प्रभाव आर्थिक आय तक सीमित नहीं रहते। इसका प्रभाव शिक्षा, स्वास्थ्य, पारिवारिक संरचना, लैंगिक भूमिकाओं, सामाजिक संबंधों तथा सांस्कृतिक जीवन पर भी पड़ता है। इसी कारण समकालीन शोध इसे बहुआयामी सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया के रूप में देखते हैं, जिसका अध्ययन केवल श्रम बाजार या रोजगार के संदर्भ में नहीं, बल्कि ग्रामीण विकास, सामाजिक असमानता और जनजातीय जीवन के व्यापक परिप्रेक्ष्य में किया जाना चाहिए। प्रस्तुत शोध-लेख भी इसी दृष्टिकोण को आधार बनाते हुए झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन की अवधारणा तथा उसके विविध आयामों का विश्लेषण करता है।

झारखंड में जनजातीय मौसमी पलायन की वर्तमान स्थिति

झारखंड भारत के उन राज्यों में शामिल है जहाँ से रोजगार की तलाश में अन्य राज्यों की ओर श्रमिकों का पलायन लंबे समय से होता रहा है। कृषि की मौसमी प्रकृति, सिंचाई सुविधाओं का सीमित विस्तार, भूमि का असमान वितरण, स्थानीय स्तर पर रोजगार के अपर्याप्त अवसर तथा आय के सीमित स्रोत अनेक परिवारों को वर्ष के कुछ महीनों के लिए अपने गाँव से बाहर कार्य करने के लिए प्रेरित करते हैं। उपलब्ध अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि झारखंड में मौसमी अथवा चक्रीय पलायन अब एक अपवाद नहीं, बल्कि अनेक जनजातीय परिवारों की नियमित आजीविका व्यवस्था का हिस्सा बन चुका है (Deshingkar & Start, 2003; Rajan et al., 2025)।

राज्य के दक्षिणी छोटानागपुर तथा संथाल परगना प्रमंडलों के आदिवासी बहुल जिलों—जैसे गुमला, सिमडेगा, लोहरदगा, खूंटी, पश्चिम सिंहभूम, सरायकेला-खरसावाँ, लातेहार, दुमका, पाकुड़ तथा साहिबगंज—से मौसमी पलायन की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत अधिक देखी जाती है। इन क्षेत्रों से बड़ी संख्या में श्रमिक कृषि कार्य समाप्त होने के बाद दिल्ली, पंजाब, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तेलंगाना तथा केरल जैसे राज्यों में अस्थायी रोजगार के लिए जाते हैं। अधिकांश प्रवासी निर्माण कार्य, ईट-भट्टों, कृषि मजदूरी, औद्योगिक इकाइयों, होटल-रेस्तराँ, घरेलू कार्य तथा अन्य असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत पाए जाते हैं, जहाँ रोजगार की प्रकृति अस्थायी तथा सामाजिक सुरक्षा सीमित होती है।

हाल में प्रकाशित Jharkhand Migration Survey 2023 ने यह स्पष्ट किया है कि राज्य से होने वाला श्रम पलायन पहले के अनुमानों की तुलना में कहीं अधिक व्यापक है। सर्वेक्षण के अनुसार बड़ी संख्या में श्रमिक आजीविका के लिए

राज्य से बाहर कार्य कर रहे हैं और उनमें चक्रीय तथा मौसमी प्रवासियों का उल्लेखनीय हिस्सा है। अध्ययन यह भी दर्शाता है कि अधिकांश प्रवासी असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं, जहाँ नियमित रोजगार, सामाजिक सुरक्षा, स्वास्थ्य सुविधाएँ तथा श्रम अधिकारों तक पहुँच सीमित है (Rajan et al., 2025)। इससे यह स्पष्ट होता है कि पलायन से आय के अवसर तो बढ़ते हैं, किन्तु रोजगार की गुणवत्ता और सुरक्षा अभी भी गंभीर चिंता का विषय बनी हुई है।

जनजातीय समुदायों में मौसमी पलायन की एक विशिष्ट विशेषता यह है कि अधिकांश परिवार स्थायी रूप से अपने गाँव नहीं छोड़ते। सामान्यतः परिवार का एक या दो सदस्य कृषि कार्य समाप्त होने के बाद चार से आठ महीनों के लिए अन्य राज्यों में कार्य करने जाता है और अगले कृषि सत्र के आरंभ से पूर्व वापस लौट आता है। इस प्रकार पलायन स्थानीय कृषि व्यवस्था और ग्रामीण जीवन के साथ जुड़ा हुआ एक चक्रीय स्वरूप ग्रहण कर लेता है। सीमांत कृषक, भूमिहीन परिवार तथा दैनिक मजदूरी पर निर्भर जनजातीय समुदाय इस प्रक्रिया से अपेक्षाकृत अधिक प्रभावित होते हैं।

हाल के वर्षों में संचार सुविधाओं, परिवहन नेटवर्क तथा श्रम बाजार तक बढ़ती पहुँच ने पलायन के स्वरूप में भी परिवर्तन किया है। अब प्रवासी श्रमिकों के कार्यस्थलों और रोजगार के क्षेत्रों में विविधता आई है, फिर भी उनका अधिकांश हिस्सा कम वेतन, अस्थिर रोजगार, असुरक्षित कार्य परिस्थितियों तथा सामाजिक सुरक्षा के अभाव जैसी समस्याओं से जूझता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि पलायन आर्थिक अवसरों के साथ-साथ नई सामाजिक और आर्थिक असुरक्षाएँ भी उत्पन्न करता है।

कोविड-19 महामारी ने झारखंड में मौसमी पलायन की संरचनात्मक प्रकृति को और अधिक स्पष्ट किया। लॉकडाउन के दौरान बड़ी संख्या में प्रवासी श्रमिक अपने गाँव लौटे, जिससे ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार, खाद्य सुरक्षा तथा सामाजिक संरक्षण की सीमाएँ उजागर हुईं। यद्यपि इस अवधि में स्थानीय स्तर पर रोजगार की माँग बढ़ी, किन्तु पर्याप्त और नियमित अवसर उपलब्ध न होने के कारण अधिकांश श्रमिक परिस्थितियाँ सामान्य होने पर पुनः अपने कार्यस्थलों की ओर लौट गए। इससे स्पष्ट होता है कि मौसमी पलायन का मूल कारण केवल आकस्मिक संकट नहीं, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था की संरचनात्मक कमजोरियाँ और स्थानीय स्तर पर सम्मानजनक आजीविका के अवसरों का अभाव है।

समग्रतः उपलब्ध साहित्य यह संकेत देता है कि झारखंड में जनजातीय मौसमी पलायन आज भी मुख्यतः विवशतापूर्ण स्वरूप का है। यद्यपि इससे परिवारों को अल्पकालिक आय प्राप्त होती है, फिर भी स्थानीय स्तर पर स्थायी रोजगार, कृषि आधारित आय में वृद्धि तथा प्रभावी सामाजिक सुरक्षा के अभाव में यह प्रवृत्ति निरंतर बनी हुई है। इसलिए मौसमी पलायन को केवल श्रम गतिशीलता की प्रक्रिया के रूप में नहीं, बल्कि ग्रामीण विकास, आजीविका सुरक्षा, सामाजिक न्याय तथा जनजातीय कल्याण से जुड़े व्यापक सामाजिक-आर्थिक प्रश्न के रूप में समझना अधिक उपयुक्त होगा।

झारखंड लंबे समय से भारत के प्रमुख श्रम-प्रेषक राज्यों में से एक रहा है। हाल ही में सम्पन्न Jharkhand Migration Survey (2023) के अनुसार, राज्य से आजीविका के उद्देश्य से लगभग 45 लाख व्यक्तियों के पलायन का अनुमान लगाया गया है। अध्ययन में यह भी उल्लेख किया गया है कि प्रवासी श्रमिकों द्वारा अपने परिवारों को भेजी जाने वाली मासिक धनराशि लगभग ₹2,549 करोड़ आँकी गई है, जो राज्य के अनेक ग्रामीण एवं आर्थिक रूप से कमजोर परिवारों की आजीविका का महत्वपूर्ण आधार है (Rajan et al., 2025)। यद्यपि यह आँकड़ा सम्पूर्ण झारखंड के श्रम पलायन का प्रतिनिधित्व करता है, उपलब्ध अध्ययनों से स्पष्ट होता है कि इस प्रवासी आबादी में जनजातीय समुदायों की उल्लेखनीय भागीदारी है, विशेषकर गुमला, सिमडेगा, लोहरदगा, खूंटी, पश्चिम सिंहभूम तथा संथाल परगना के आदिवासी बहुल क्षेत्रों से होने वाला मौसमी पलायन राज्य की एक प्रमुख सामाजिक-आर्थिक विशेषता बन चुका है। इसलिए जनजातीय समाज में मौसमी पलायन का अध्ययन व्यापक श्रम पलायन की इसी पृष्ठभूमि में अधिक सार्थक रूप से समझा जा सकता है।

झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन के प्रमुख कारण

झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन अनेक परस्पर जुड़े हुए आर्थिक, सामाजिक, पर्यावरणीय तथा संस्थागत कारकों का परिणाम है। उपलब्ध शोध यह संकेत देते हैं कि इसे किसी एक कारण से नहीं समझा जा सकता। अधिकांश जनजातीय परिवारों के लिए यह बेहतर जीवन की खोज से अधिक आजीविका की अनिश्चितता से निपटने का एक व्यावहारिक उपाय है। स्थानीय स्तर पर रोजगार की कमी, कृषि पर अत्यधिक निर्भरता, सीमित संसाधन, कम आय तथा क्षेत्रीय विकास में असमानताएँ मिलकर ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न करती हैं, जिनमें मौसमी पलायन परिवारों की नियमित

आजीविका रणनीति का हिस्सा बन जाता है (Deshingkar & Start, 2003; Rajan et al., 2025)।

गरीबी और सीमित आजीविका के अवसर

झारखंड के अधिकांश जनजातीय परिवारों की आय कृषि, कृषि मजदूरी, लघु वनोपज तथा दिहाड़ी श्रम जैसे सीमित स्रोतों पर आधारित है। इन गतिविधियों से पूरे वर्ष नियमित आय प्राप्त नहीं हो पाती, जिसके कारण कृषि कार्य समाप्त होने के बाद आर्थिक संकट की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। ऐसे समय में परिवार के एक या अधिक सदस्य अन्य राज्यों में रोजगार की तलाश करते हैं। अनेक अध्ययनों ने मौसमी पलायन को ग्रामीण निर्धनता और आय की अस्थिरता से निपटने की एक प्रमुख आजीविका रणनीति के रूप में वर्णित किया है (Deshingkar & Start, 2003)। इस प्रकार पलायन केवल जीविकोपार्जन का साधन नहीं, बल्कि आय के विविधीकरण का माध्यम भी बन जाता है।

वर्षा-आधारित कृषि और सिंचाई सुविधाओं का अभाव

राज्य की कृषि व्यवस्था मुख्यतः मानसूनी वर्षा पर निर्भर है। सिंचाई सुविधाओं का सीमित विस्तार तथा कृषि का निम्न उत्पादक स्तर अधिकांश क्षेत्रों में एक ही फसल तक खेती को सीमित कर देता है। कृषि मौसम समाप्त होने के बाद कई महीनों तक ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसर लगभग समाप्त हो जाते हैं। परिणामस्वरूप कृषि पर निर्भर परिवारों के लिए मौसमी पलायन आय अर्जित करने का एक व्यवहारिक विकल्प बन जाता है। यह स्थिति विशेष रूप से उन जिलों में अधिक दिखाई देती है जहाँ सिंचाई अवसंरचना और कृषि निवेश अपेक्षाकृत कम विकसित हैं।

भूमिहीनता और अल्प भूमि स्वामित्व

झारखंड के अनेक जनजातीय परिवार सीमांत कृषक हैं अथवा उनके पास कृषि योग्य भूमि अत्यंत कम है। इतनी छोटी जोत से पूरे वर्ष परिवार की आवश्यकताओं की पूर्ति संभव नहीं हो पाती। भूमि का विखंडन, कम उत्पादकता और कृषि से सीमित आय परिवारों को अतिरिक्त आय के स्रोत खोजने के लिए विवश करती है। परिणामस्वरूप परिवारों के सदस्य निर्माण कार्य, ईंट-भट्ठों, कृषि मजदूरी तथा अन्य असंगठित क्षेत्रों में अस्थायी रोजगार के लिए पलायन करते हैं। उपलब्ध साहित्य यह संकेत देता है कि भूमिहीन एवं सीमांत कृषक परिवारों में पलायन की प्रवृत्ति अपेक्षाकृत अधिक है।

स्थानीय रोजगार और आर्थिक अवसरों का अभाव

खनिज संसाधनों से समृद्ध होने के बावजूद झारखंड के ग्रामीण एवं आदिवासी क्षेत्रों में रोजगार के पर्याप्त अवसर विकसित नहीं हो सके हैं। औद्योगिक गतिविधियाँ मुख्यतः कुछ शहरी और औद्योगिक क्षेत्रों तक सीमित हैं, जबकि अधिकांश जनजातीय गाँव आज भी कृषि और असंगठित श्रम पर निर्भर हैं। स्थानीय स्तर पर नियमित रोजगार की कमी तथा गैर-कृषि क्षेत्र के सीमित विकास के कारण बड़ी संख्या में श्रमिक बेहतर अवसरों की तलाश में राज्य से बाहर जाने के लिए विवश होते हैं। यह स्थिति क्षेत्रीय विकास में मौजूद असंतुलन को भी दर्शाती है।

अधिक मजदूरी और रोजगार के अवसरों का आकर्षण

मौसमी पलायन को केवल स्थानीय अभावों के संदर्भ में समझना पर्याप्त नहीं है। बाहरी राज्यों में उपलब्ध अपेक्षाकृत अधिक मजदूरी, नियमित कार्य तथा निरंतर श्रम मांग भी इस प्रक्रिया को गति प्रदान करती है। पंजाब, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र, दिल्ली, कर्नाटक और केरल जैसे राज्यों में निर्माण, कृषि, उद्योग तथा सेवा क्षेत्र में मिलने वाले रोजगार झारखंड के श्रमिकों को आकर्षित करते हैं। यह प्रवृत्ति एवरेट एस. ली के Push-Pull Theory की पुष्टि करती है, जिसके अनुसार स्थानीय प्रतिकूल परिस्थितियाँ और बाहरी आर्थिक अवसर मिलकर पलायन को प्रेरित करते हैं।

शिक्षा और कौशल विकास की सीमाएँ

जनजातीय क्षेत्रों में गुणवत्तापूर्ण शिक्षा तथा व्यावसायिक कौशल प्रशिक्षण की सीमित उपलब्धता भी पलायन का एक महत्वपूर्ण कारण है। अधिकांश श्रमिक अकुशल या अर्द्धकुशल होने के कारण स्थानीय स्तर पर बेहतर रोजगार प्राप्त नहीं कर पाते और कम वेतन वाले असंगठित क्षेत्रों में कार्य करने के लिए बाध्य होते हैं। कौशल की कमी न केवल रोजगार के अवसरों को सीमित करती है, बल्कि प्रवासी श्रमिकों की आय, कार्य परिस्थितियों और श्रम अधिकारों पर भी प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

सरकारी योजनाओं के सीमित परिणाम

ग्रामीण रोजगार और आजीविका सुरक्षा को सुदृढ़ करने के उद्देश्य से मनरेगा तथा अन्य सरकारी योजनाएँ संचालित की

जा रही हैं। इन योजनाओं ने कई क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराने और ग्रामीण आय बढ़ाने में सकारात्मक योगदान दिया है। फिर भी विभिन्न अध्ययनों से यह संकेत मिलता है कि कार्यदिवसों की सीमित उपलब्धता, मजदूरी भुगतान में विलंब, कार्यों की अनियमितता तथा क्रियान्वयन संबंधी समस्याओं के कारण ये योजनाएँ पूरे वर्ष स्थायी रोजगार सुनिश्चित नहीं कर पातीं। फलस्वरूप कृषि अवकाश के दौरान अनेक परिवार आज भी मौसमी पलायन को अपनी आजीविका का आवश्यक साधन मानते हैं।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन किसी एक कारण का परिणाम नहीं, बल्कि अनेक संरचनात्मक परिस्थितियों की संयुक्त अभिव्यक्ति है। गरीबी, कृषि की अनिश्चितता, सीमित भूमि स्वामित्व, स्थानीय रोजगार का अभाव, कौशल संबंधी कमियाँ तथा सरकारी योजनाओं की सीमित प्रभावशीलता मिलकर इस प्रक्रिया को निरंतर बनाए रखती हैं। इसलिए केवल पलायन को रोकने के प्रयास पर्याप्त नहीं होंगे। इसके लिए स्थानीय स्तर पर टिकाऊ आजीविका के अवसरों का विस्तार, कृषि विविधीकरण, सिंचाई अवसंरचना का विकास, कौशल उन्नयन, ग्रामीण गैर-कृषि रोजगार को बढ़ावा तथा प्रभावी सामाजिक सुरक्षा तंत्र का निर्माण समान रूप से आवश्यक है।

मौसमी पलायन का सामाजिक एवं आर्थिक प्रभाव

झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन का प्रभाव केवल आय अर्जित करने तक सीमित नहीं है। यह परिवार की आर्थिक स्थिति, शिक्षा, स्वास्थ्य, लैंगिक संबंधों, सामाजिक संरचना तथा सांस्कृतिक जीवन सहित अनेक पक्षों को प्रभावित करता है। उपलब्ध साहित्य से यह स्पष्ट होता है कि पलायन के प्रभाव एकरेखीय नहीं हैं। एक ओर इससे परिवारों की आय में वृद्धि होती है, कृषि पर निर्भरता कुछ हद तक कम होती है तथा उपभोग और निवेश की क्षमता बढ़ती है; दूसरी ओर असुरक्षित कार्य परिस्थितियाँ, श्रम शोषण, शिक्षा में व्यवधान, पारिवारिक विखंडन तथा सामाजिक सुरक्षा के अभाव जैसी समस्याएँ भी सामने आती हैं। इसलिए मौसमी पलायन का मूल्यांकन उसके सकारात्मक और नकारात्मक दोनों आयामों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए (Deshingkar & Start, 2003; Breman, 1996)।

आर्थिक प्रभाव और ग्रामीण आजीविका

ग्रामीण एवं जनजातीय परिवारों के लिए मौसमी पलायन आय के विविधीकरण का एक महत्वपूर्ण माध्यम बन चुका है। Deshingkar और Start (2003) के अनुसार ग्रामीण परिवार कृषि आय की अनिश्चितता को संतुलित करने के लिए मौसमी पलायन का सहारा लेते हैं, जिससे उन्हें अतिरिक्त नकद आय प्राप्त होती है। इसके विपरीत Jan Breman (1996) का मत है कि यह रणनीति मुख्यतः संरचनात्मक गरीबी, भूमिहीनता और असंगठित श्रम बाजार की विवशताओं से उत्पन्न होती है। उनके अनुसार अधिकांश मामलों में पलायन विकल्प की अपेक्षा आवश्यकता का परिणाम है।

झारखंड के संदर्भ में Rajan, Peter, Sunitha, Singh एवं Adhikari (2025) द्वारा प्रस्तुत *Jharkhand Migration Survey 2023* के निष्कर्ष इस बहस को अनुभवजन्य आधार प्रदान करते हैं। अध्ययन के अनुसार राज्य से आजीविका के उद्देश्य से लगभग 45 लाख लोगों का श्रम पलायन होता है तथा प्रवासी श्रमिकों द्वारा भेजी जाने वाली मासिक धनराशि लगभग ₹2,549 करोड़ आँकी गई है। यह प्रेषण ग्रामीण परिवारों के लिए खाद्य सुरक्षा, बच्चों की शिक्षा, स्वास्थ्य व्यय तथा कृषि निवेश का महत्वपूर्ण स्रोत है। इससे यह स्पष्ट होता है कि मौसमी पलायन ग्रामीण अर्थव्यवस्था में नकदी प्रवाह बनाए रखने में उल्लेखनीय भूमिका निभाता है। फिर भी Ravi Srivastava (2020) का तर्क है कि असंगठित क्षेत्र में कार्यरत प्रवासी श्रमिकों की आय अनिश्चित रहती है और सामाजिक सुरक्षा के अभाव के कारण उनकी आर्थिक स्थिति स्थायी रूप से सुदृढ़ नहीं हो पाती।

शिक्षा पर प्रभाव

मौसमी पलायन का सबसे प्रत्यक्ष प्रभाव बच्चों की शिक्षा पर दिखाई देता है। अनेक परिवार रोजगार के लिए दूसरे राज्यों में जाते समय बच्चों को भी साथ ले जाते हैं, जिससे उनकी विद्यालयी शिक्षा बाधित होती है। कुछ परिस्थितियों में बच्चों की नियमित उपस्थिति प्रभावित होती है, जबकि आर्थिक दबाव के कारण कुछ बच्चे श्रम कार्यों में भी शामिल हो जाते हैं। R. B. Bhagat ने आंतरिक पलायन और शिक्षा के संबंध पर चर्चा करते हुए संकेत दिया है कि प्रवासी परिवारों के बच्चों के लिए शिक्षा की निरंतरता बनाए रखना एक गंभीर चुनौती है। इसी प्रकार UNESCO (2019) ने प्रवासी बच्चों के लिए पोर्टेबल शिक्षा व्यवस्था तथा बहुभाषी विद्यालयी प्रणाली की आवश्यकता पर बल दिया है। झारखंड के आदिवासी

क्षेत्रों में विद्यालयों की दूरी, आर्थिक कठिनाइयाँ तथा पारिवारिक श्रम की आवश्यकता इन समस्याओं को और जटिल बना देती हैं।

महिलाओं पर प्रभाव

मौसमी पलायन का प्रभाव महिलाओं पर बहुआयामी रूप से पड़ता है। जब परिवार के पुरुष सदस्य रोजगार के लिए बाहर जाते हैं, तब कृषि कार्य, घरेलू दायित्व, बच्चों की देखभाल और बुजुर्गों की जिम्मेदारी मुख्यतः महिलाओं पर आ जाती है। दूसरी ओर, जब महिलाएँ स्वयं प्रवासी श्रमिक के रूप में कार्य करती हैं, तब उन्हें कम मजदूरी, असुरक्षित कार्य परिस्थितियों और लैंगिक भेदभाव जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। **Virginus Xaxa (2008)** ने जनजातीय समाज में महिलाओं के श्रम को आजीविका की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण माना है, जबकि उसका सामाजिक और आर्थिक मूल्यांकन अपेक्षाकृत कम होता है !

स्वास्थ्य और श्रम सुरक्षा

झारखंड से जाने वाले अधिकांश प्रवासी श्रमिक निर्माण कार्य, ईंट-भट्ठों, कृषि, खनन तथा अन्य असंगठित क्षेत्रों में कार्यरत होते हैं। इन क्षेत्रों में सुरक्षित कार्य परिस्थितियों, स्वास्थ्य बीमा, दुर्घटना सुरक्षा तथा सामाजिक संरक्षण की व्यवस्था अक्सर अपर्याप्त होती है। International Labour Organization (2021) के अनुसार असंगठित क्षेत्र में कार्यरत प्रवासी श्रमिक कार्यस्थल दुर्घटनाओं, व्यावसायिक बीमारियों तथा स्वास्थ्य सेवाओं तक सीमित पहुँच जैसी समस्याओं का सामना करते हैं। कोविड-19 महामारी ने भी यह स्पष्ट किया कि सामाजिक सुरक्षा तंत्र से बाहर रहने वाले प्रवासी श्रमिक संकट की परिस्थितियों में सबसे अधिक प्रभावित होते हैं।

सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव

जनजातीय समाज की सामाजिक संरचना सामुदायिक सहभागिता, पारंपरिक संस्थाओं और सांस्कृतिक आयोजनों पर आधारित होती है। जब परिवार के सदस्य लंबे समय तक गाँव से बाहर रहते हैं, तब सामुदायिक जीवन, पारिवारिक संबंधों तथा सांस्कृतिक गतिविधियों पर इसका प्रभाव दिखाई देता है। L. P. Vidyarthi (1977) तथा Nadeem Hasnain (2019) ने जनजातीय समाज की सामुदायिक प्रकृति पर बल देते हुए उल्लेख किया है कि आर्थिक परिवर्तन और बाहरी श्रम बाजार से बढ़ता संपर्क पारंपरिक सामाजिक संबंधों तथा सांस्कृतिक व्यवहारों में परिवर्तन लाता है। इस दृष्टि से मौसमी पलायन को सामाजिक और सांस्कृतिक संक्रमण की प्रक्रिया के रूप में भी देखा जा सकता है।

समेकित विश्लेषण

उपलब्ध साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन यह दर्शाता है कि मौसमी पलायन को लेकर विद्वानों के दृष्टिकोण पूर्णतः समान नहीं हैं। Deshingkar और Start इसे ग्रामीण परिवारों की आजीविका रणनीति और जोखिम प्रबंधन के साधन के रूप में देखते हैं, जबकि Jan Breman इसे संरचनात्मक असमानताओं और श्रम शोषण की अभिव्यक्ति मानते हैं। Ravi Srivastava सामाजिक सुरक्षा, श्रम अधिकारों और सम्मानजनक रोजगार की आवश्यकता पर बल देते हैं, वहीं Rajan et al. (2025) के अनुभवजन्य निष्कर्ष यह दर्शाते हैं कि पलायन से ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण आर्थिक योगदान अवश्य मिलता है, परंतु यह सुरक्षित और स्थायी रोजगार का विकल्प अभी भी नहीं बन पाया है।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन का प्रभाव बहुआयामी है। यह परिवारों की आय बढ़ाने और आजीविका को सहारा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है, किन्तु इसके साथ शिक्षा, स्वास्थ्य, लैंगिक समानता, श्रम सुरक्षा तथा सामाजिक जीवन से जुड़ी अनेक चुनौतियाँ भी उत्पन्न होती हैं। इसलिए नीतिगत स्तर पर ऐसे उपाय आवश्यक हैं जो स्थानीय स्तर पर सम्मानजनक रोजगार, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, कौशल विकास, सामाजिक सुरक्षा और जनजातीय क्षेत्रों के समावेशी विकास को सुदृढ़ करें। तभी विवशतापूर्ण मौसमी पलायन की आवश्यकता को दीर्घकाल में कम किया जा सकेगा।

सरकारी नीतियाँ एवं उनकी प्रभावशीलता

झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन को कम करने तथा स्थानीय स्तर पर आजीविका के अवसरों का विस्तार करने के उद्देश्य से केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा अनेक योजनाएँ संचालित की गई हैं। इन योजनाओं का मूल उद्देश्य ग्रामीण रोजगार को बढ़ावा देना, आय के स्रोतों में विविधता लाना, कौशल विकास को प्रोत्साहित करना तथा जनजातीय

परिवारों की आर्थिक सुरक्षा को सुदृढ़ करना है। इसके बावजूद उपलब्ध शोध यह संकेत देते हैं कि इन पहलों के सकारात्मक परिणामों के बावजूद विवशतापूर्ण मौसमी पलायन पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है। इससे स्पष्ट होता है कि योजनाओं की उपलब्धियों के साथ-साथ उनकी सीमाओं और क्रियान्वयन संबंधी चुनौतियों का भी समालोचनात्मक मूल्यांकन आवश्यक है।

महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (मनरेगा)

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार की उपलब्धता सुनिश्चित करने के उद्देश्य से लागू मनरेगा को झारखंड जैसे जनजातीय बहुल राज्यों में आजीविका सुरक्षा का एक महत्वपूर्ण साधन माना जाता है। Ravi Srivastava (2020) के अनुसार यदि इस योजना का प्रभावी और समयबद्ध क्रियान्वयन हो, तो यह कृषि अवकाश के दौरान ग्रामीण श्रमिकों के विवशतापूर्ण पलायन को उल्लेखनीय रूप से कम कर सकती है। इसी प्रकार Ashwani Kumar और Prakash Chandra Deogharia (2017) ने झारखंड पर आधारित अपने अध्ययन में पाया कि मनरेगा ने अनेक ग्रामीण परिवारों को स्थानीय स्तर पर रोजगार उपलब्ध कराया, जिससे कुछ क्षेत्रों में मौसमी पलायन की तीव्रता में कमी देखी गई। हालांकि अध्ययन यह भी इंगित करता है कि कार्यदिवसों की सीमित उपलब्धता, मजदूरी भुगतान में विलंब तथा परिसंपत्तियों की गुणवत्ता से जुड़ी समस्याओं के कारण इसका प्रभाव सभी क्षेत्रों में समान नहीं रहा।

जनजातीय कार्य मंत्रालय एवं प्रवासी श्रमिक सहायता पहल

जनजातीय प्रवासी श्रमिकों की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए **Ministry of Tribal Affairs** ने विभिन्न संस्थागत पहलों को बढ़ावा दिया है। इनमें **Shram Shakti - National Migration Support Portal**, कौशल मानचित्रण, प्रवासी श्रमिकों के पंजीकरण तथा स्रोत एवं गंतव्य राज्यों के बीच समन्वय की व्यवस्था जैसी पहलें उल्लेखनीय हैं। इन प्रयासों का उद्देश्य प्रवासी श्रमिकों को सरकारी योजनाओं, सामाजिक सुरक्षा तथा संस्थागत सहायता से जोड़ना है। उपलब्ध दस्तावेज़ यह संकेत देते हैं कि विश्वसनीय प्रवासी आँकड़ों और प्रभावी समन्वय तंत्र के अभाव में जनजातीय श्रमिक श्रम शोषण, मानव तस्करी तथा सामाजिक सुरक्षा से वंचित रहने के अधिक जोखिम में रहते हैं। यद्यपि इन पहलों ने संस्थागत स्तर पर एक आधार तैयार किया है, फिर भी इनकी पहुँच और प्रभाव अभी सभी प्रभावित क्षेत्रों तक समान रूप से नहीं हो पाया है।

वनाधिकार, वनोपज आधारित आजीविका और स्थानीय रोजगार

जनजातीय समुदायों की आजीविका पर भूमि और वन संसाधनों का गहरा प्रभाव रहा है। Walter Fernandes तथा Virginius Xaxa ने अपने अध्ययनों में इस बात पर बल दिया है कि भूमि एवं वन संसाधनों तक सुरक्षित पहुँच जनजातीय समुदायों की आर्थिक स्थिरता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसी परिप्रेक्ष्य में Forest Rights Act, 2006, Van Dhan Vikas Kendras तथा लघु वनोपज आधारित आजीविका कार्यक्रमों का उद्देश्य स्थानीय स्तर पर आय के अवसर बढ़ाना और वन संसाधनों के मूल्य संवर्धन को प्रोत्साहित करना है। यद्यपि कई क्षेत्रों में इन कार्यक्रमों से आय में वृद्धि और सामुदायिक भागीदारी को बढ़ावा मिला है, फिर भी अधिकारों की मान्यता, बाज़ार तक पहुँच तथा योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन से संबंधित चुनौतियाँ अब भी बनी हुई हैं।

कौशल विकास और आजीविका विविधीकरण

झारखंड से जाने वाले अधिकांश प्रवासी श्रमिक अकुशल अथवा अर्द्धकुशल कार्यों में संलग्न रहते हैं। इस स्थिति में कौशल विकास कार्यक्रम, स्वयं सहायता समूह, **National Rural Livelihoods Mission (NRLM)** तथा राज्य स्तरीय आजीविका कार्यक्रम महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। इन पहलों का उद्देश्य स्थानीय उद्यमिता को बढ़ावा देना, गैर-कृषि रोजगार के अवसर विकसित करना तथा ग्रामीण आय के स्रोतों में विविधता लाना है। **Rajan et al. (2025)** का मत है कि केवल रोजगार उपलब्ध कराना पर्याप्त नहीं होगा; सुरक्षित कार्य परिस्थितियाँ, कौशल उन्नयन, श्रम अधिकारों की रक्षा तथा सम्मानजनक रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना भी उतना ही आवश्यक है। इससे मौसमी पलायन की विवशता को कम करने के साथ-साथ प्रवासी श्रमिकों की कार्य परिस्थितियों में भी सुधार संभव है।

योजनाओं का समालोचनात्मक मूल्यांकन

उपलब्ध साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन यह दर्शाता है कि सरकारी योजनाओं ने जनजातीय परिवारों को स्थानीय

रोजगार, आय में वृद्धि तथा आजीविका के वैकल्पिक अवसर उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। इसके बावजूद योजनाओं के क्रियान्वयन में क्षेत्रीय असमानताएँ, प्रशासनिक विलंब, सीमित कार्यदिवस, अपर्याप्त संस्थागत समन्वय तथा सामाजिक सुरक्षा की कमजोर व्यवस्था जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। **Deshingkar और Start (2003)** का मत है कि जब तक ग्रामीण क्षेत्रों में पूरे वर्ष सम्मानजनक और नियमित रोजगार उपलब्ध नहीं होगा, तब तक मौसमी पलायन की प्रवृत्ति पूरी तरह समाप्त नहीं हो सकती। इसी प्रकार **Ravi Srivastava (2020)** प्रवासी श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा की पोर्टेबिलिटी, न्यूनतम मजदूरी के प्रभावी अनुपालन तथा श्रम अधिकारों को सुदृढ़ करने पर बल देते हैं। दूसरी ओर, **Rajan et al. (2025)** यह तर्क प्रस्तुत करते हैं कि झारखंड जैसे राज्यों में पलायन को केवल रोकना व्यावहारिक समाधान नहीं है; बल्कि इसे सुरक्षित, नियमित और अधिकार-आधारित बनाने की दिशा में भी समान रूप से प्रयास आवश्यक हैं।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि सरकारी नीतियों ने जनजातीय आजीविका को सुदृढ़ करने की दिशा में महत्वपूर्ण प्रगति अवश्य की है, किंतु उनकी प्रभावशीलता मुख्यतः क्रियान्वयन की गुणवत्ता पर निर्भर करती है। स्थानीय स्तर पर टिकाऊ रोजगार, कृषि विविधीकरण, कौशल विकास, वनाधारित उद्यमों का विस्तार तथा प्रभावी सामाजिक सुरक्षा तंत्र के समन्वित विकास के बिना झारखंड के जनजातीय समाज में विवशतापूर्ण मौसमी पलायन को स्थायी रूप से कम करना कठिन होगा।

चर्चा (Discussion)

प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन एक बहुआयामी सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया है, जिसे केवल गरीबी, बेरोजगारी अथवा रोजगार की खोज तक सीमित करके नहीं समझा जा सकता। उपलब्ध साहित्य के तुलनात्मक विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि आर्थिक असुरक्षा, कृषि की अनिश्चितता, सीमित प्राकृतिक संसाधन, सामाजिक वंचना, श्रम बाजार की संरचना तथा सरकारी नीतियों की प्रभावशीलता—ये सभी कारक परस्पर जुड़े हुए हैं और सामूहिक रूप से पलायन की प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं। इसलिए झारखंड के जनजातीय संदर्भ में मौसमी पलायन का विश्लेषण बहु-विषयक दृष्टिकोण से करना अधिक उपयुक्त प्रतीत होता है।

पलायन की सैद्धांतिक व्याख्या के स्तर पर एवरेट एस. ली (1966) का *Push-Pull Theory* आज भी महत्वपूर्ण आधार प्रदान करता है। झारखंड के संदर्भ में स्थानीय स्तर पर रोजगार का अभाव, भूमिहीनता, कृषि संकट तथा आय की अनिश्चितता जैसे कारक लोगों को गाँव छोड़ने के लिए विवश करते हैं, जबकि औद्योगिक एवं विकसित राज्यों में उपलब्ध अपेक्षाकृत अधिक मजदूरी और निरंतर रोजगार उन्हें आकर्षित करते हैं। फिर भी अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि यह सिद्धांत जनजातीय समाज की ऐतिहासिक वंचना, सामाजिक बहिष्करण तथा संसाधनों तक असमान पहुँच जैसे आयामों की पूर्ण व्याख्या नहीं कर पाता।

दूसरी ओर Priya Deshingkar और Daniel Start (2003) मौसमी पलायन को ग्रामीण परिवारों की आजीविका रणनीति के रूप में देखते हैं। उनके अनुसार सीमित संसाधनों वाले परिवार कृषि जोखिम को कम करने तथा आय के स्रोतों में विविधता लाने के लिए पलायन का सहारा लेते हैं। प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्ष भी इस दृष्टिकोण का आंशिक समर्थन करते हैं। झारखंड के अनेक जनजातीय परिवारों के लिए पलायन नियमित आय का एक महत्वपूर्ण साधन बन चुका है, किंतु यह रणनीति अधिकांशतः विकल्प की अपेक्षा विवशता की परिस्थितियों में अपनाई जाती है। इसलिए पलायन को एक साथ आजीविका रणनीति और संरचनात्मक बाध्यता—दोनों रूपों में समझना अधिक उपयुक्त होगा।

Ravi Srivastava (2019; 2020) ने इस विमर्श को आगे बढ़ाते हुए यह रेखांकित किया है कि पलायन संबंधी नीति का केंद्र केवल रोजगार उपलब्ध कराना नहीं होना चाहिए, बल्कि सम्मानजनक कार्य परिस्थितियाँ, सामाजिक सुरक्षा, न्यूनतम मजदूरी तथा श्रमिक अधिकारों की प्रभावी सुरक्षा भी सुनिश्चित की जानी चाहिए। कोविड-19 महामारी के अनुभवों ने इस दृष्टिकोण की प्रासंगिकता को और अधिक स्पष्ट किया। महामारी के दौरान बड़ी संख्या में प्रवासी श्रमिकों की वापसी ने यह दिखाया कि सामाजिक सुरक्षा तंत्र की कमजोरियाँ संकट की परिस्थितियों में और अधिक गहरी हो जाती हैं।

झारखंड के संदर्भ में S. Irudaya Rajan, Benoy Peter तथा उनके सहयोगियों द्वारा किए गए *Jharkhand Migration Survey 2023* ने यह स्पष्ट किया है कि राज्य से होने वाला श्रम पलायन व्यापक स्तर पर जारी है तथा प्रवासी श्रमिकों द्वारा भेजी जाने वाली धनराशि ग्रामीण परिवारों की अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण योगदान देती है। साथ ही अध्ययन यह भी दर्शाता है कि अधिकांश प्रवासी असंगठित क्षेत्र में कार्यरत हैं, जहाँ रोजगार की अस्थिरता और सामाजिक सुरक्षा का

अभाव अब भी प्रमुख चुनौतियाँ हैं। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि पलायन से आय में वृद्धि अवश्य होती है, किंतु यह दीर्घकालिक सामाजिक और आर्थिक सुरक्षा की गारंटी नहीं देता।

झारखंड-विशिष्ट अध्ययनों से यह भी स्पष्ट होता है कि कृषि की अनिश्चितता, सीमित भूमि स्वामित्व, ऋणग्रस्तता, स्थानीय रोजगार की कमी तथा प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ता दबाव आज भी मौसमी पलायन के प्रमुख कारण बने हुए हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि पिछले वर्षों में अनेक सरकारी योजनाओं के लागू होने के बावजूद पलायन को जन्म देने वाले मूल संरचनात्मक कारकों में अपेक्षित परिवर्तन नहीं हो पाया है। यद्यपि मनरेगा, वनाधिकार अधिनियम, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन तथा अन्य जनजातीय विकास कार्यक्रमों ने कई क्षेत्रों में सकारात्मक प्रभाव डाला है, फिर भी इन योजनाओं की पहुँच और प्रभावशीलता सभी क्षेत्रों में समान नहीं रही। इसका कारण योजनाओं के क्रियान्वयन में क्षेत्रीय असमानता, प्रशासनिक सीमाएँ तथा स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप योजना निर्माण का अभाव है।

समग्र विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन को समझने के लिए किसी एक सिद्धांत या एकल कारण पर आधारित दृष्टिकोण पर्याप्त नहीं है। **Lee** का *Push-Pull Theory*, **Breman** का संरचनात्मक विश्लेषण, **Deshingkar** का *Livelihood Framework*, **Ravi Srivastava** का श्रम एवं सामाजिक सुरक्षा संबंधी दृष्टिकोण तथा **Rajan et al.** के अनुभवजन्य निष्कर्ष एक-दूसरे के पूरक प्रतीत होते हैं। प्रस्तुत अध्ययन की प्रमुख विशेषता यही है कि इन विविध दृष्टिकोणों का समन्वित विश्लेषण करते हुए झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन को आर्थिक विवशता, आजीविका रणनीति, सामाजिक परिवर्तन तथा नीतिगत चुनौतियों से जुड़ी एक समग्र प्रक्रिया के रूप में समझने का प्रयास किया गया है। यही इस शोध-लेख का प्रमुख विश्लेषणात्मक योगदान है।

नीतिगत सुझाव

प्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्ष यह संकेत देते हैं कि झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन का संबंध केवल रोजगार की कमी से नहीं, बल्कि ग्रामीण विकास की संरचनात्मक चुनौतियों, कृषि की अनिश्चितता, सीमित प्राकृतिक संसाधनों, कमजोर सामाजिक सुरक्षा तथा क्षेत्रीय असमानताओं से भी है। इसलिए नीतिगत हस्तक्षेपों का उद्देश्य केवल पलायन को रोकना नहीं होना चाहिए, बल्कि ऐसी परिस्थितियों का निर्माण करना होना चाहिए जिनमें जनजातीय परिवार सम्मानजनक और टिकाऊ आजीविका प्राप्त कर सकें। साथ ही, जो श्रमिक रोजगार के लिए पलायन करते हैं, उनके अधिकारों, सुरक्षा और सामाजिक संरक्षण को भी समान महत्व दिया जाना चाहिए। इस आधार पर निम्नलिखित नीतिगत सुझाव प्रस्तुत किए जाते हैं।

स्थानीय रोजगार एवं ग्रामीण अर्थव्यवस्था का सुदृढ़ीकरण

अध्ययन से स्पष्ट है कि स्थानीय स्तर पर नियमित रोजगार का अभाव मौसमी पलायन का प्रमुख कारण है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि के अतिरिक्त गैर-कृषि रोजगार के अवसरों का विस्तार आवश्यक है। खाद्य प्रसंस्करण, हस्तशिल्प, कुटीर उद्योग, पशुपालन, मत्स्य पालन, मधुमक्खी पालन तथा ग्रामीण सेवा क्षेत्र जैसे रोजगारोन्मुख क्षेत्रों को प्रोत्साहित कर स्थानीय स्तर पर स्थायी आय के स्रोत विकसित किए जा सकते हैं। इसके साथ ही जनजातीय युवाओं के लिए सूक्ष्म एवं लघु उद्यमों को वित्तीय सहायता, विपणन सहयोग और तकनीकी परामर्श उपलब्ध कराया जाना चाहिए।

कृषि का आधुनिकीकरण और जल संसाधनों का विकास

झारखंड की वर्षा-आधारित कृषि ग्रामीण आजीविका को अस्थिर बनाती है। इस स्थिति में लघु सिंचाई परियोजनाओं, जल संरक्षण, वर्षा जल संचयन तथा सूक्ष्म सिंचाई प्रणालियों का विस्तार आवश्यक है। कृषि विविधीकरण के अंतर्गत बागवानी, सब्जी उत्पादन, फलोत्पादन, औषधीय पौधों की खेती तथा बहुफसली कृषि को बढ़ावा देकर ग्रामीण परिवारों की आय और रोजगार दोनों में वृद्धि की जा सकती है। इससे कृषि अवकाश की अवधि कम होगी और पलायन की आवश्यकता भी घटेगी।

वनाधारित आजीविका और स्थानीय उद्यमिता को प्रोत्साहन

जनजातीय समुदायों की पारंपरिक आजीविका में वन संसाधनों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसलिए लघु वनोपज के संग्रहण, प्रसंस्करण, भंडारण, मूल्य संवर्धन तथा विपणन के लिए संस्थागत व्यवस्था को मजबूत किया जाना चाहिए।

Van Dhan Vikas Kendras, वन उत्पाद सहकारी समितियों तथा स्थानीय उद्यमों के माध्यम से महुआ, तसर, लाख,

शहद, साल बीज और अन्य वनोपजों के मूल्य संवर्धन को बढ़ावा दिया जा सकता है। इससे स्थानीय स्तर पर रोजगार सृजित होगा और बाहरी श्रम बाजार पर निर्भरता कम होगी।

कौशल विकास और सुरक्षित रोजगार

अध्ययन से यह स्पष्ट हुआ कि अधिकांश प्रवासी श्रमिक अकुशल अथवा अर्धकुशल कार्यों में संलग्न रहते हैं। इसलिए कौशल विकास कार्यक्रमों को स्थानीय आवश्यकताओं और क्षेत्रीय आर्थिक संभावनाओं के अनुरूप पुनर्गठित किया जाना चाहिए। निर्माण कार्य, विद्युत, प्लंबिंग, मशीन संचालन, डिजिटल सेवाएँ, कृषि प्रसंस्करण, पर्यटन तथा उद्यमिता जैसे क्षेत्रों में प्रशिक्षण प्रदान करने के साथ-साथ प्रशिक्षण के बाद रोजगार उपलब्ध कराने की व्यवस्था भी विकसित की जानी चाहिए। इससे प्रवासी श्रमिकों की आय, कार्य परिस्थितियों और रोजगार की गुणवत्ता में सुधार संभव होगा।

मनरेगा और आजीविका योजनाओं का प्रभावी समन्वय

मनरेगा ने ग्रामीण रोजगार उपलब्ध कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, किन्तु इसका प्रभाव तब अधिक होगा जब इसे केवल मजदूरी कार्यक्रम न मानकर दीर्घकालिक परिसंपत्ति निर्माण और कृषि विकास से जोड़ा जाए। जल संरक्षण, भूमि विकास, सिंचाई, वृक्षारोपण तथा सामुदायिक संसाधनों के विकास जैसे कार्यों को प्राथमिकता देकर स्थानीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ किया जा सकता है। साथ ही मनरेगा, राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन तथा अन्य जनजातीय विकास कार्यक्रमों के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करना आवश्यक है, ताकि विभिन्न योजनाएँ एक-दूसरे की पूरक बन सकें।

प्रवासी श्रमिकों के लिए अधिकार-आधारित सामाजिक सुरक्षा

यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि निकट भविष्य में मौसमी पलायन को पूर्णतः समाप्त करना व्यावहारिक नहीं है। इसलिए नीतियों का एक महत्वपूर्ण उद्देश्य प्रवासी श्रमिकों के अधिकारों की रक्षा भी होना चाहिए। श्रमिकों का पंजीकरण, पोर्टेबल राशन कार्ड, स्वास्थ्य बीमा, दुर्घटना बीमा, श्रम कानूनों का प्रभावी अनुपालन, न्यूनतम मजदूरी की निगरानी तथा स्रोत और गंतव्य राज्यों के बीच संस्थागत समन्वय को सुदृढ़ करना आवश्यक है।

शिक्षा, महिला सशक्तीकरण और सामुदायिक भागीदारी

प्रवासी परिवारों के बच्चों की शिक्षा में निरंतरता बनाए रखने के लिए आवासीय विद्यालयों, छात्रावासों, बहुभाषी शिक्षण, डिजिटल शिक्षा तथा स्थानांतरण के बाद भी शिक्षा जारी रखने की व्यवस्था को मजबूत किया जाना चाहिए। साथ ही स्वयं सहायता समूहों, महिला उद्यमिता, वित्तीय समावेशन और सामुदायिक संस्थाओं को सुदृढ़ कर महिलाओं की आर्थिक भागीदारी और निर्णय क्षमता बढ़ाई जा सकती है। ग्राम सभाओं, स्थानीय निकायों और जनजातीय संगठनों की सक्रिय सहभागिता से योजनाओं का क्रियान्वयन अधिक पारदर्शी, उत्तरदायी और स्थानीय आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जा सकता है।

समग्र नीतिगत दृष्टिकोण

उपलब्ध साहित्य और प्रस्तुत अध्ययन के विश्लेषण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन की समस्या का समाधान किसी एक योजना या अल्पकालिक हस्तक्षेप से संभव नहीं है। इसके लिए कृषि विकास, ग्रामीण औद्योगिकीकरण, वनाधारित आजीविका, कौशल विकास, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा, सामाजिक सुरक्षा तथा स्थानीय स्वशासन को एकीकृत करते हुए बहु-क्षेत्रीय विकास रणनीति अपनाने की आवश्यकता है। नीति का उद्देश्य पलायन को पूरी तरह समाप्त करना नहीं, बल्कि विवशतापूर्ण पलायन को कम करना, स्थानीय स्तर पर सम्मानजनक आजीविका के अवसर बढ़ाना तथा प्रवासी श्रमिकों के लिए सुरक्षित, अधिकार-आधारित और गरिमापूर्ण कार्य परिस्थितियाँ सुनिश्चित करना होना चाहिए। यही दृष्टिकोण झारखंड के जनजातीय समुदायों के समावेशी और सतत् विकास की दिशा में अधिक प्रभावी सिद्ध होगा।

निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि झारखंड के जनजातीय समाज में मौसमी पलायन एक जटिल सामाजिक-आर्थिक प्रक्रिया है, जिसे केवल गरीबी या बेरोजगारी के परिणाम के रूप में नहीं देखा जा सकता। कृषि की अनिश्चितता, सीमित सिंचाई, भूमिहीनता, स्थानीय रोजगार की कमी, वन संसाधनों पर दबाव, कौशल की कमी तथा क्षेत्रीय असमानता जैसे अनेक संरचनात्मक कारण जनजातीय परिवारों को पलायन के लिए विवश करते हैं। इस प्रकार पलायन कई परिवारों के

लिए आजीविका का विकल्प नहीं, बल्कि जीवन-निर्वाह की अनिवार्य रणनीति बन गया है। अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि मौसमी पलायन के प्रभाव सकारात्मक और नकारात्मक दोनों हैं। एक ओर प्रवासी श्रमिकों द्वारा भेजी गई धनराशि ग्रामीण परिवारों की आय, शिक्षा और स्वास्थ्य में सुधार लाती है, वहीं दूसरी ओर असंगठित क्षेत्र में कार्यरत श्रमिकों को कम मजदूरी, असुरक्षित कार्य-स्थितियाँ और सामाजिक सुरक्षा के अभाव जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। इसके अतिरिक्त बच्चों की शिक्षा में बाधा, महिलाओं पर बढ़ता बोझ और पारिवारिक विखंडन जैसे सामाजिक प्रभाव भी सामने आते हैं।

विभिन्न विद्वानों के विचारों से यह स्पष्ट होता है कि पलायन को समझने के लिए बहुआयामी दृष्टिकोण आवश्यक है। Lee का Push-Pull सिद्धांत आर्थिक कारणों को रेखांकित करता है, जबकि Breman इसे संरचनात्मक असमानताओं से जोड़ते हैं। Deshingkar और Start इसे आजीविका रणनीति मानते हैं, वहीं Srivastava सामाजिक सुरक्षा पर बल देते हैं। Rajan et al. (2025) के अनुसार सुरक्षित और अधिकार-आधारित श्रम पलायन के लिए नीतिगत सुधार आवश्यक हैं। सरकारी योजनाओं जैसे MGNREGA, NRLM, Forest Rights Act और कौशल विकास कार्यक्रमों ने कुछ सकारात्मक प्रभाव डाले हैं, परंतु इनके क्रियान्वयन में असमानता, भुगतान में देरी और सीमित प्रभावशीलता जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। इसलिए योजनाओं के प्रभावी और पारदर्शी कार्यान्वयन पर विशेष ध्यान देना आवश्यक है।

नीतिगत रूप से स्थानीय रोजगार सृजन, कृषि सुधार, कुटीर उद्योगों का विकास, कौशल उन्नयन तथा प्रवासी श्रमिकों के लिए सामाजिक सुरक्षा और श्रम अधिकारों को सुनिश्चित करना अत्यंत आवश्यक है। विशेष रूप से महिलाओं और युवाओं के लिए लक्षित कार्यक्रमों का विस्तार किया जाना चाहिए।

अंततः यह कहा जा सकता है कि मौसमी पलायन को पूरी तरह समाप्त करना संभव नहीं है, परंतु विवशतापूर्ण पलायन को कम कर सुरक्षित और सम्मानजनक श्रम गतिशीलता को बढ़ावा देना आवश्यक है। जब तक ग्रामीण क्षेत्रों में स्थायी आजीविका और समावेशी विकास सुनिश्चित नहीं होगा, तब तक यह प्रक्रिया जारी रहेगी। अतः जनजातीय विकास नीतियों में आजीविका सुरक्षा और सुरक्षित पलायन को समान महत्व दिया जाना चाहिए।

References

1. Bhagat, R. B. (2010). *Internal migration in India: Are the underprivileged migrating more?* Asia-Pacific Population Journal, 25(1), 27-45.
2. Breman, J. (1996). *Footloose Labour: Working in India's Informal Economy*. Cambridge University Press.
3. Breman, J. (2020). *The Pandemic in India and Its Impact on Footloose Labour*. Journal of Asian Studies, 79(4), 901-919.
4. Deshingkar, P., & Start, D. (2003). *Seasonal Migration for Livelihoods in India: Coping, Accumulation and Exclusion*.
5. International Labour Organization. (2021). *Extending Social Protection to Informal Workers in India*. ILO.
6. Kundu, A. (2007). *Migration and Urbanisation in India in the Context of Poverty Alleviation*. In G. Bhattacharya (Ed.), *Migration, Development and Poverty*. Academic Foundation.
7. Lee, E. S. (1966). A theory of migration. *Demography*, 3(1), 47-57.
8. Ministry of Rural Development. (2023). *Mahatma Gandhi National Rural Employment Guarantee Act (MGNREGA): Annual Report 2022-23*. Government of India.
9. Ministry of Tribal Affairs. (2021). *Report of the Expert Committee on Tribal Migration (Shram Shakti)*. Government of India.
10. Ministry of Tribal Affairs. (2023). *Annual Report 2022-23*. Government of India.
11. Rajan, S. I., Peter, B., Sunitha, S., Singh, K., & Adhikari, S. (2025). *Unravelling Labour Migration from Jharkhand: Key Findings from the Jharkhand Migration Survey 2023*. Economic & Political Weekly, 60(20).
12. Srivastava, R. (2011). Labour migration in India: Recent trends, patterns and policy issues. *Indian Journal of Labour Economics*, 54(3), 411-440.
13. Srivastava, R. (2020). *Understanding Circular Migration in India during COVID-19: Its Nature and Policy Implications*. Centre for Employment Studies, Institute for Human Development.
14. Srivastava, R., & Sasikumar, S. K. (2003). *An Overview of Migration in India, Its Impacts and Key Issues*. Regional Conference on Migration, Development and Pro-Poor Policy Choices in Asia.